ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 10 अंक 24 27 अगस्त से 2 सितम्बर, 2015 दयानन्दाब्द 192 सृष्टि सम्वत् 1960853116 सम्वत् 2072 श्रा. शु. 12

वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर

वेद विरुद्ध मान्यताओं को चुनौती देने के लिए आर्यजन कमर कसें

– स्वामी आर्यवेश

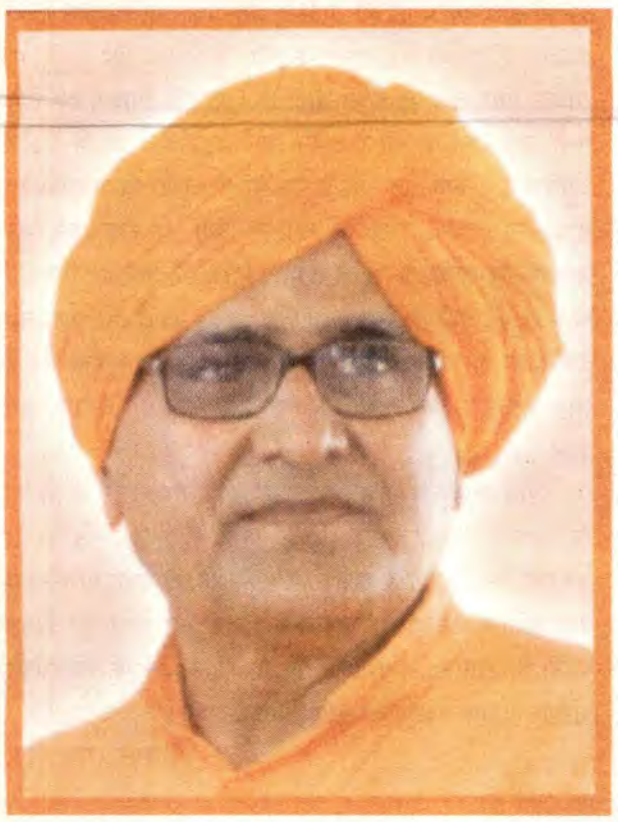

श्रावणी महापर्व के अवसर पर आयोजित किये जाने वाले "वेद प्रचार सप्ताह" के कार्यक्रमों के परिप्रेक्ष्य में सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने आर्य समाजों के समस्त अधिकारियों तथा आयोजकों का आह्वान करते हुए कहा कि आर्य समाज ही वह संगठन है जो समाज में फैले अन्धकार को अविद्या को अज्ञान को अन्धविश्वास को कुरीतियों को रूढ़ियों को भस्म करने में सक्षम है। आवश्यकता इस बात की है कि तीव्र गति से पनप रहे धार्मिक पाखण्ड तथा अनेकों अन्य सामाजिक बुराइयों से आक्रान्त इस देश की दूषित हो चुकी व्यवस्था को बदल कर एक नई व्यवस्था खड़ी करने की और इसके लिए आवश्यक है कि हम अधिक से अधिक युवाओं को महर्षि दयानन्द और आर्य समाज से परिचित करायें, उनको निकट लाकर आर्य समाज के सेवा प्रकल्पों से जोड़ें। जन सम्पर्क अभियान को पूरी ताकत के साथ प्रारम्भ करें और आर्य समाज में नये रक्त का संचार करें।

स्वामी आर्यवेश जी ने आर्य युवकों का आह्वान करते हुए कहा कि सारे देश में जीवन की ज्योति जगाने वाले आर्य समाज की स्थापना भटकते हुओं का पथ प्रदर्शन करने के लिए प्रकाश स्तम्भ के रूप में की गई थी। आज देश में गोहत्या, नशाखोरी के साथ-साथ धार्मिक पाखण्ड ने अपनी सारी सीमायें तोड़ दी हैं। स्वामी जी ने कहा कि आज धर्म के नाम पर अनेकों तरह की दुकाने चल रही हैं जिनका काम येन-केन प्रकारेण ग्राहक जुटाना व उनका शोषण करना है। अमर नाथ यात्रा, कांवर यात्रा, हज यात्रा, मंदिरों में चमत्कारों को प्रदर्शित करना, हाथ हिलाकर सोने की जंजीर निकालना, वृक्षों पर पहाड़ों पर देवताओं की आकृतियाँ प्रकट होना, यह सब अत्यन्त सुनियोजित ढंग से चलाये जा रहे क्रिया-कलाप हैं जिसके प्रभाव में भोली-भाली धर्म परायण जनता आ जाती है और उनका भरपूर शोषण किया जाता है। इन सब पाखण्डों का संचालन करने वाले मठाधीशों और गुरु घंटालों ने अपनी ताकत इतनी बढ़ा ली है कि सरकार तथा प्रशासन उनके खुले अनाचार, भ्रष्टाचार, व्यभिचार पर हाथ डालने से घबराता है। प्रतिदिन ही अखबारों और दूरदर्शन के माध्यम से इन विकृत चरित्र वाले ढोंगी पाखंडियों की दिल दहला देने वाली खबरें सुनी तथा पढ़ी जाती हैं। अब समय आ गया है कि धार्मिक पाखण्ड को जड़मूल से मिटा दिया जाये और इसके लिए आवश्यक है कि जनता को इन पाखण्डियों के जाल से मुक्त कराना होगा। जब तक आम जनता में जागृति नहीं आयेगी तब तक कुछ नहीं हो सकता। आर्य समाज ने अपने जन्म काल से ही इस प्रकार के पाखण्ड को दूर करने के लिए प्रयास किये हैं। आज फिर आर्य समाज की तरफ सबकी निगाहें हैं और आर्य समाज एक बार फिर अपने चिन्तन और शक्ति से अपनी श्रेष्ठता और उपयोगिता सिद्ध कर सकता है।

स्वामी जी ने कहा कि यदि हम अपने जीवन में श्रेष्ठता प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें वेद का पठन-पाठन तथा श्रवण और प्रवचन करना होगा। आज व्यक्ति का चारित्रिक पतन इसलिए हो रहा है कि लोगों ने वेद को भुला दिया है। ऋषि-मुनियों की अनमोल शिक्षाओं को दर किनार कर दिया है। स्वामी जी ने कहा कि अपने आपको जीवन्त और प्राणवान बनाने के लिए संघर्ष की आवश्यकता होती है क्योंकि संघर्ष से विकास होता है और आन्दोलनों के द्वारा ही जन-जागृति समाज में फैलाई जा सकती है। आज समय आ गया है कि प्रत्येक क्षेत्र में आर्य समाज को कदम बढ़ाने व फैलाने होंगे। न केवल धर्म अपितु राजनीति, समाज एवं शिक्षा प्रत्येक क्षेत्र में आज परिवर्तन की आवश्यकता है। स्वामी जी ने कहा कि आज आम जन किंकर्तव्य विमूढ़ हो गये हैं, उनकी समझ में नहीं आ रहा है कि हम क्या करें कहां जायें। ऐसे समय में आर्य समाज ही उनका सम्बल बन सकता है। आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य को जागरण अभियान चलाना होगा, लोगों की समस्याओं को सुलझाना होगा, प्रत्येक आर्य समाज को समस्या निवारण केन्द्र बनाना होगा तथा लोगों का विश्वास जीतना होगा।

स्वामी जी ने कहा कि देश में जिस तेजी से धार्मिक पाखण्ड बढ़ा है उसमें सामाजिक एकता, धार्मिक एकता तथा राष्ट्रीय एकता तीनों के लिए गम्भीर खतरा पैदा हो गया है। धर्म और अध्यात्म के नाम पर इन पाखण्डियों की दूकानदारी तथा इनका व्यवसाय फलता-फूलता रहे इनकी ऐषणायें फलीभूत होती रहें इसलिए ये विभिन्न प्रकार के पाखण्डों को बढ़ावा देते हैं। दोहरा चरित्र जीने वाले इन पाखण्डियों का परदे के पीछे का रूप अत्यन्त भयावह होता है। इनसे देश को मुक्त कराना ही होगा। स्वामी जी ने आर्यों का आह्वान करते हुए कहा कि धार्मिक पाखण्ड और सामाजिक बुराईयों के विरूद्ध पूरे देश में अभियान चलाया जाये तथा इन सामाजिक बुराइयों को दूर करने में युवा शक्ति जागरूक होकर सामाजिक चेतना जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाये।

स्वामी जी ने कहा कि इस बार के कार्यक्रमों में वेद कथा के साथ-साथ लोगों को इन समस्त बुराईयों के विरुद्ध जागृत करने का विशेष प्रयास किया जाना चाहिए।

स्वामी जी ने कहा कि वेद प्रचार सप्ताह के कार्यक्रमों में विशेष ध्यान देने योग्य है कि मानव मूल्यों की पुनः स्थापना करने के लिए एक सामूहिक सोच को विकसित किया जाये और यह कार्य वेद के आधार पर ही हो सकता है क्योंकि वेद पूर्णतया सार्वभौमिक और परमात्मा की सत्य वाणी है। और वेदों का जीवन दर्शन ही आज के जीवन तथा जगत को सत्य, धर्म, न्याय, सुख, शान्ति और सच्चा आनन्द दे सकता है। समस्त आर्यजन उत्साहपूर्वक इस विशेष प्रचार सप्ताह को मनाने का संकल्प लें यही कामना है।

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

व्रतबन्ध अर्थात यज्ञोपवीत

- उपेन्द्र आचार्य

भारतीय जीवन में संस्कारों का विशेष महत्व है और इन संस्कारों के कारण मानव जीवन श्रेष्ठ बनता है और उसका प्रभाव मानवीय जीवन में होता है, परन्तु इन दिनों इन संस्कारों के नाम पर फिजूलखर्ची बढ़ गई है। प्राचीन आर्यों ने ये संस्कार बड़ी ही बुद्धिमत्तापूर्ण किए थे और उन्होंने यह नहीं सोचा था कि ये ही संसकार आगे विकृत हो जायेंगे और आज ये संस्कार व्यवसाय बन गए हैं और आडम्बर छा गया है।

भारतीय जीवन में 16 संस्कार होते हैं - गर्भादान पुंसवन, सीमन्तोनयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्रासन, चूड़ाकर्म, व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) वेदारम्भ, समावर्तन विवाह, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास और अन्त्येष्टि यह 16 संस्कार करने पर मनुष्य का जीवन एकदम शुद्ध और पवित्र हो जाता है।

चूड़ाकर्म (मुण्डन संस्कार) के पश्चात् माता ही बच्चे को घर में सामान्य ज्ञान देती है और बच्चा कैसे अपने बड़ों का आदर करे यह सिखाया जाता है।

यज्ञोपवीत संस्कार 9वाँ संस्कार है और इसे व्रतबन्धन संस्कार भी कहते हैं, क्योंकि इस संस्कार में तीन व्रतों को लिया जाता है। जिसमें ईश्वर के प्रति निष्ठा तथा प्रकृति ने जो कुछ भी रचना की है उसे स्वच्छ रखते हुए उसके रहस्यों का ज्ञान करे, माता-पिता, आचार्य की सेवा उनके सदुपदेशों को अपने जीवन में उतारना तथा विद्या प्राप्त कर और अपने चिन्तन के द्वारा नये विचार भी समाज को देना। इस प्रकार जीवन में तीन व्रत लेने पड़ते हैं और तीन धागों की ब्रह्मगांठ रहती है अर्थात प्रतिदिन इन तीनों व्रतों का पालन करना और यह व्रत इसलिए लिए जाते हैं कि विद्या प्रारम्भ करने के समय मन में उत्साह जागृत हो।

विद्या प्राप्त करना और व्रतों का पालन करने का अधिकार स्त्रियों को भी होने से उसे भी यज्ञोपवीत धारण का अधिकार है। प्राचीन आर्यों की व्यवस्था में स्त्रियों और बालिकाओं को अलग गुरुकुल में भेजा जाता था जहां पर गुरु भी महिला हुआ करती थीं और उस गुरुकुल में महिलाओं की ही व्यवस्था रहती थी और लड़कों के गुरुकुल में सारी व्यवस्था पुरुष देखते थे। उस समय सहशिक्षा का कोई प्रावधान नहीं था।

प्राचीन समय में विद्वान् लोग बालक को विद्यारम्भ करते समय कपास के धागे का यज्ञोपवीत दिया करते थे और वर्तमान समय में जब बालक पाठशाला को जावे उस समय यह संस्कार करना चाहिए और यह चिन्ह ज्ञान प्राप्त करने वालों का चिन्ह होता है। इसके धारण करने पर बहुत बड़ी जवाबदारी आ जाती है।

प्राचीन समय में यह व्यवस्था थी कि सभी बालकों का यज्ञोपवीत संस्कार किया जाता था और यह विशेष रूप से व्यवस्था थी कि अगर कोई ठीक-ठीक विद्या का सम्पादन नहीं करता था। चाहे वह ब्राह्मण का ही बालक क्यों नहीं होता उसका यज्ञोपवीत छीन लिया जाता था और उसकी अप्रतिष्ठा होती थी। उसी तरह शूद्रादिक उत्तम विद्या सम्पादन कर ब्राह्मणत्व के अधिकारी होकर यज्ञोपवीत धारण करते थे। इस प्रकार की व्यवस्था प्राचीन आर्यों ने कर रखी थी। इस प्रकार प्रत्येक स्त्री-पुरुष को विद्या प्राप्त करने का अधिकार था।

वैसे भी वर्तमान समय में सभी विद्या प्राप्त करते हैं; लेकिन जो विद्या प्राप्त करने में रुचि रखता है उसे ही डिग्री मिलती है बाकी के लोगों को नहीं मिल पाती है और फिर वे लोग चाहें तो व्यापार, धन्धा, चपरासी या सफाई कार्य करें और पढ़ने-लिखने वाले उच्चाधिकारी बनते हैं जिनमें योग्यता होती है बड़े-बड़े पदों राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री तक बन जाते हैं। जिनकी विद्या सम्पादन में रुचि है वे ब्राह्मणत्व को प्राप्त करते हैं। फिर उसी प्रकार उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ को वैसे-वैसे यज्ञोपवीत धारण करने पड़ते हैं।

वर्तमान समय में इस संसकार का स्वरूप बदल दिया गया है और आज बड़े-बड़े बच्चे हो जाते हैं और कॉलेज में चले जाते हैं, तब घरवाले यज्ञोपवीत संस्कार करते हैं, जबकि बालक का यज्ञोपवीत संस्कार उस समय करना चाहिए जब वह पाठशाला में जाने योग्य हो जावे या माता-पिता को चाहिए वह जिस दिन बच्चे का नाम स्कूल में लिखवाए उस दिन यह संस्कार कर देना चाहिए जिससे बच्चे में उत्साह की वृद्धि होती है और स्वजनों द्वारा जो उस बालक को दान दिया जाता है वह उसकी पढ़ाई पर खर्च होना चाहिए न कि फालतू आडम्बरों में करना चाहिए। यज्ञोपवीत संस्कार आनन्द का संस्कार है और माता-पिता को कितनी खुशी होती है कि उनका बच्चा स्कूल जाने लगा है और उसे लिखता देख उन्हें अपने पर्वूजों का ध्यान आ जाता है कि उन्होंने जिस प्रकार हमें सुयोग्य बनाया है, हम अपने बच्चों को भी सुयोग्य आचरणवान बनाएं और विद्या का अधिकारी बनाकर पूर्वजों के ऋण से मुक्त हों।

इसी प्रकार 10वाँ संस्कार वेदारम्भ का होता है, जिसमें गुरु या इन दिनों मास्टर बच्चे को अक्षर ज्ञान कराकर समाज की व्यावहारिक बातें बताता है, उसे वेदारम्भ संस्कार ही कहा जा सकता है और 11वीं या 12वीं तक विद्या प्राप्त करने के बाद समावर्तन संसकार कहा जा सकता है; क्योंकि 12वीं पास विद्यार्थी अच्छे-बुरे का ज्ञान प्राप्त कर लेता है और जिन्हें अधिक विद्या प्राप्त करना हो तो कॉलेज आदि में जावें। आज भी देखने में आता है कि 35-36 साल तक पढ़ाई की जाती है, उसी प्रकार प्राचीनकाल में भी वेदज्ञान के रहस्यों को जानने के लिए 40 साल और उससे भी अधिक समय तक पढ़ाई की जाती थी। श्रावणी उपाकर्म इस दिन सभी लोग सामूहिक रूप से अपने-अपने यज्ञोपवीत बदलते हैं और अपने व्रतों में कहां ढील आई है, उस पर भी विचार किया जाता है। साधु-सन्त विद्वान, परिव्राजक सब इन दिनों एक स्थान पर ठहर जाते हैं और अपने उपदेशों से सद्मार्ग दिखाते हैं तथा इस दिन उन विद्वानों के सान्निध्य में यज्ञोपवीत बदले जाते हैं और नये यज्ञोपवीत धारण करते हैं तथा निरन्तर अध्ययन का संकल्प लेते हैं और बारिश के चार माह तक स्वाध्याय करते हैं, चिन्तन-मनन करते हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने बच्चों को संस्कारवान बनाएं, जिस प्रकार एक 50 ग्राम लोहे को सुसंस्कारित कर घड़ी बनाई जाती है और 10 पैसे के लोहे को हजार पांच-सौ में बेचा जाता है, उसी प्रकार संस्कार से बालक और पुरुषों की कीमत बढ़ती है, इसलिए श्रावणी के पर्व पर संकल्प लें कि हम अपने परिवार में उत्पन्न बच्चे को संस्कारवान बनायेंगे।

- जैसलमेर (राजस्थान)

श्रावणी उपाकर्म और रक्षा-बन्धन

- माता राज मेहता

जैसे सूर्य और किरणों का, मेघ और वर्षा का, फूल और सुगन्ध का परस्पर सम्बन्ध है, ठीक उसी प्रकार का सम्बन्ध वैदिक मान्यताओं और पर्वों का है। पर्व किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीयता और संस्कृति की पहचान है, जिन पर किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक, धार्मिक भित्ति टिकी रहती है।

'वेदोऽखिलो धर्म मूलं' (मनुस्मृति) अर्थात् वेद धर्म का मूल है। 'सुखस्य मूलं धर्मः' (चाणक्य नीति) अर्थात् धर्म सुख का मूल है। इस कारण ऋषि मुनि लोग सृष्टि के आरम्भ से ही वेदानुकूल आचरण करते आए हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कहा है- वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। (आर्य समाज का तीसरा नियम) कहने का तात्पर्य यह है कि वेद के स्वाध्याय का उपक्रम अर्थात् प्रारम्भ दिन से विशेषतः किया जाता है, उसे उपाकर्म कहते हैं। यह श्रावण मास की पूर्णिमा को होता है। इसी कारण इस पर्व को श्रावणी उपाकर्म कहते हैं।

द्विज (ब्राह्मण) श्रावणी उपाकर्म के दिन ही पुराने यज्ञोपवीत (जनेऊ) उतारकर नए यज्ञोपवीत धारण करते हैं। आगामी श्रावणी उपाकर्म तक के लिए वेदादि सद्शास्त्रों का स्वाध्याय करने के लिए संकल्प धारण करने वालों की पहचान है। वेद में यज्ञोपवीत धारण करने के लिए और यज्ञोपवीत की पवित्रता की महत्ता बताने के लिए निम्न मन्त्र हैं:-

यज्ञोपवीतं परमं पवित्र प्रजापतेर्यत्सहसं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीत बलमस्तु तेजः।।

यज्ञोपवीत अधिकार का द्योतक नहीं अपितु कर्त्तव्य का बोधक है। इसके तीन धागे, तीन ऋणों अर्थात् पितृ ऋण, देव-ऋण के द्योतक है। ये हृदय को स्पर्श करता हुआ नीचे की ओर जाता है, तो प्रेम का प्रतीक है। नीचे दाहिनी ओर लगी गांठ कटिबद्धता का चिन्ह है। अभिप्राय यह है कि हम अपने समस्त कर्त्तव्यों का पालन कटिबद्ध होकर प्रेम सहित करें।

मध्यकाल में, श्रावणी उपाकर्म के जिस दिन ब्राह्मण लोग क्षत्रियों एवं अन्य वर्ण के लोगों के हाथ में रक्षा सूत्र बांधते थे, जिससे वे रक्षा सूत्र से प्रेरणा लेकर जीवन को वेदानुकूल मर्यादित बनाएं। विद्या प्रचार-प्रसार के लिए ब्राह्मणों ओर विद्वानों की रक्षा करें। यज्ञ के समय पुरोहित यज्ञमान के हाथ में सूत्र बांधता है, जिसका अभिप्राय यह है कि यजमान यज्ञ की मर्यादा का पालन करें और अपने जीवन को मर्यादित बनाएं।

कालान्तर में समाज व्यवस्था दूषित हो जाने से नारी की मर्यादा पर आघात होने लगे। स्वतन्त्र रूप से यज्ञों और सामाजिक कृत्यों में भाग लेने वाली श्रद्धा की मूर्ति, शसक्त नारी, परतन्त्रता की बेड़ियों और घरों की चारदीवारी में असहाय और अबला बन कर रह गई। अब उसके पास अपनी मर्यादा की रक्षा करने का एक ही तरीका था, रक्षा-सूत्र और अपनी मर्यादा की रक्षा की मांग वह अपने भाई से ही कर सकती थी। अतः ऐसे समय में बहनों ने भाइयों के हाथ में रक्षासूत्र बांधना आरम्भ किया। उसी दिन से श्रावणी उपाकर्म का नाम 'रक्षा-बन्धन' भी पड़ गया।

ऐतिहासिक प्रचलित घटना के अनुसार वीर राणा के वीरगति को प्राप्त होने के पश्चात् पड़ोसी मुस्लिम राजा की आंख राणा की वीरांगना पत्नी कर्मवती और उसके राज्य को हड़पने पर लगी थी। कर्णवती विदुषी होने के साथ दूरदर्शिनी और कुशल राजनीतिज्ञया भी थी। अतः उसने अपने राज्य एवं अपनी मर्यादा की रक्षा हेतु मुगल बादशाह हुमांयु को पत्र के साथ-साथ रक्षा सूत्र भेजा। हुमायुं ने बहिन कर्णवती के रक्षा सूत्र में बंधकर उसके राज्य और मर्यादा का भार अपने ऊपर ले लिया। भले ही वह कर्णवती को जीवित न पा सका। इस घटना से प्रमाणित हो जाता हैकि बहन भाई का इतना पवित्र नाता है कि भाई रक्षा सूत्र में बंधकर कर्त्तव्य पालन के लिए कटिबद्ध हो जाता है, जैसा कहा भी गया है-

भैया कृष्ण भेजती हूँ मैं प्यारी राखी तुमको आज।
कई बार जिसको भेजा है, सजा-सजाकर नूतन साथ।
बोलो सोच समझकर बोलो, क्या राखी बंधावाओगे?
भीर पड़ेगी क्या तुम रक्षा करने दौड़े आओगे?

अतः श्रावणी उपाकर्म रक्षा बन्धन हमें सन्देश देता है कि वेद के स्वाध्याय से विद्या की प्राप्ति, धर्म का ज्ञान और सुख की साधना करना, यज्ञोपवीत से संकल्प शक्ति का विकास करना, कर्त्तव्य पालन के लिए कटिबद्ध होना, रक्षा-सूत्र से प्रेरणा लेकर मर्यादा का पालन करना तथा परस्पर प्रेम में वृद्धि करना है। यही इस पर्व को मनाने का औचित्य है।

- आ. वा. आ. ज्वालापुर

आओ! वेद की ज्योति घर-घर में जलाएं

- डॉ. सत्यपाल सिंह

विश्व के इतिहास में वेद प्राचीनतम पुस्तक है तथा भारतीय संस्कृति के अनुसार वेद अपौरुषेय तथा ईश्वरीय ज्ञान है। शब्द नित्य है इसीलिए इसे अक्षरों से बना मानते हैं अक्षर का अर्थ है जिसका नाश न हो। आधुनिक विज्ञान के हिसाब से ऊर्जा का नाश नहीं होता उसका सिर्फ रूपान्तर होता रहता है। ज्ञान भी इस तरह से एक ऊर्जा है। इस ज्ञान का मूल स्रोत ईश्वर है। उदाहरणार्थ, हमने पढ़ना लिखना किसी गुरुसे सीखा, हमारे गुरु ने अपने गुरुसे .... इस प्रकार पीछे जाते हुए जब दुनियां में धरती पर प्रथम मानव ने जन्म लिया तो उसका गुरु तब केवल ईश्वर ही हो सकता है। योग दर्शनकार कहता है:-

स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।

(1/26)

अर्थात ईश्वर काल की मर्यादा से परे मानव का सर्वप्रथम गुरु है। ईश्वर को ज्ञान देने के लिए बोलने की अथवा आने जाने की जरूरत नहीं है- वह तो हृदय में ज्ञान का प्रकाश देता है। अलग-अलग चारों वेदों का चार ऋषियों (अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा) की आत्माओं में एक साथ ही प्रकटन हुआ।

वेद का ज्ञान सार्वकालिक, सार्वभौमिक, वैज्ञानिक तथा कल्याणकारक है। वेदों में किसी ऐतिहासिक देश, जाति, धर्म, जगह तथा नाम का वर्णन नहीं है। उस पर मानव मात्र का बराबर का अधिकार है। वेद संसार की सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। मनु भगवान उसे 'सर्व ज्ञान मयो हि स'' (1/126) अर्थात् सब प्रकार के ज्ञान से पूर्ण मानते हैं। अथर्ववेद घोषणा करता है- यस्मिन वेदा निहिता विश्वरूपाः (4/35/6)- अर्थात् विश्व का रूप वेद में निहित है और इसलिए प्राचीन काल से ही वेदों का पढ़ना-पढ़ाना व सुनना-सुनाना आर्य संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है। वेद विहित कर्मों को ही आर्यों ने धर्म का नाम दिया था।

'आर्य' शब्द का अर्थ श्रेष्ठ है, ज्ञानवान है। 'आर्य ईश्वर-पुत्र' अर्थात् ईश्वर के पुत्र को आर्य कहा गया है। इस देश में अंग्रेजों के आने से पहले 'आर्य' शब्द कहीं भी किसी जाति अथवा नस्ल के लिए प्रयोग नहीं हुआ। यह तो विदेशी इतिहासकारों तथा उनके देशी चाटुकारों के राजनैतिक तथा सांस्कृतिक षड्यन्त्र के कारण हुआ। बौद्धों का आर्य सत्य किसी जाति का सत्य नहीं अपितु मनुष्य मात्र का श्रेष्ठ सत्य है। इसी प्रकार 'आर्य' संबोधन किसी जाति के लिए न होकर आदर के लिए प्रयोग होता था। रामायण तथा महाभारत के जमाने में आर्यपुत्र तथा आर्यपुत्री का प्रयोग सामान्य था। कवि कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में शकुन्तला दुष्यंत को 'आर्यपुत्र' कहती है, आर्य का व्यवहार श्वसुर के लिए तथा 'आर्या' का सास के लिए आदर के लिए होता था। जब दुष्यंत शकुन्तला को पहचानने से इंकार कर देता है तो शकुन्तला उसी दुष्यंत को 'अनार्य' कहती है। यदि दुष्यंत आर्य नस्ल का होता तो क्या व्यक्ति एक ही वर्ष के अन्दर अपनी नस्ल बदल सकता है?

ऋग्वेद ने तो ईश्वरीय घोषणा की है- 'अहम् भूमिमददाम् आर्याय' (4/26/2)। अर्थात् भगवान ने तो यह धरती आर्यों के लिए ही दी है। इसलिए तो वैदिक संस्कृति बार-बार पर उद्घोष करती रही:-

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्ः।

(ऋ. 9/63/5)

अर्थात् इन्द्र (देवत्व) को बढ़ाने के लिए राक्षसों का, दुष्टों का संहार करो तथा सारे विश्व को आर्य बनाओ।

जब से हम लोग अपने को आर्य कहना भूल गए, हमारा अपने ही वेद, शास्त्र, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, पुराण, गीता आदि संस्कृति साहित्य से नाता ही टूट गया। इन किसी भी पुस्तक में भारत देश के लोगों ने अपने को हिन्दू नहीं कहा। सब जगह हम अपने को आर्य कहकर गौरवान्वित होते रहे। अगर हमारा नाम आर्य है, तो हमें श्रेष्ठ बनना ही होगा। अनार्यत्व (अनाड़ीपन, अज्ञानता) को लात मारनी ही होगी। हमें दुष्टों, दैत्यों, राक्षसों व रावणों का हनन करना ही होगा। जब से इस देश के लोगों ने विदेशियों के कारण अथवा अपनी गलती के कारण अपने को बेचारा हिन्दु बना लिया, हमारी वीरता और वैभव खत्म हो गए। पिछले लगभग डेढ़ हजार वर्षों का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब से आर्यावर्त हिन्दुस्तान बन गया, हिन्दुओं का देश बन गया इस पर विदेशी जातियों के आक्रमण पर आक्रमण हाने लगे। इस देश की संपत्ति को लूटा गया, विशाल व दुर्लभ साहित्य को जलाया गया और धीरे-धीरे यह देश विदेशियों का जिसको हमारे प्राचीन साहित्य ने म्लेच्छ कहा था- गुलाम बन गया।

जिस भगवत गीता के अमृतमय उपेदश ने किंकर्त्तव्य विभूत मोहग्रस्त अर्जुन को युद्ध करने के लिए खड़ा किया गया था- उस गीता के करोड़ों भक्त पिछले एक डेढ़ हजार वर्षों में कायर, कमजोर, दीन हीन, नपुंसक बन करके अपनी जिन्दगी गुजारते रहे। हमारे सारे देवी-देवताओं के हाथों में कोई न कोई शस्त्र है पर उनकी प्रतिदिन की पूजा भी हमें अन्याय का विरोध करने की प्रेरणा न दे सकी। जो पौधा अपने मूल से उखड़ जाता है उसे वरूण देव का वर्षा जल, सूर्य भगवान का ताप तथा मन्द शीतल समीर भी तो जीवित नहीं रख सकता। आर्य हमारा नाम था, वेद हमारा धर्म था.... उससे दूर जाकर हमारा यह हाल होना ही था। अभी भी समय है कि हम अपने को फिर से आर्य कहकर पुनः गौरवान्वित हो।

मानव जीवन की सारी विद्याएं व विधाए वेदों के अन्दर बीज रूप से विद्यमान हैं। मनुष्य जीवन के चारों पुरुषार्थों- धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष का ज्ञान तथा उन्हें प्राप्त करने का मार्ग वेद ने बताया है। अध्यात्म का अर्थ मोक्ष की प्राप्ति नहीं है- मोक्ष भी अध्यात्म का एक भाग है। अध्यात्म तो एक मार्ग है जहां हम अपने को जान पाते हैं, या जान सकते हैं। अध्यात्म आत्म तत्व के साक्षात्कार का, देवत्व प्राप्ति का महामार्ग है। हम कौन है, कहां से आए हैं, कहां जाना है आदि प्रश्नों का उत्तर अध्यात्म का विषय है। वेद कहता है:

ओ३म् कोऽसि, कतमोऽसि, कस्यासि, को नामऽसि।

(यजु. 7/29)

अर्थात् तू कौन है, मैं कौन हूँ? तू कौन सा है, मैं कौन सा हूँ? तू किसका है, मैं किसका हूँ? तू क्या नाम या शक्ति वाला है, मैं क्या सामर्थ्य वाला हूँ? वेद अपनी आत्मा को जानने की बात करता है। वेद का अध्यात्म वनों तथा पर्वतीय कन्दराओं का अध्यात्म नहीं है। वैदिक अध्यात्म मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष की बात करता है। इसीलिए मैं उसे सांसारिक अध्यात्म कहता हूँ। उदाहरण के लिए हम वेद भगवान से प्रार्थना करते हैं-

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यम् दत्वा ब्रजत ब्रह्मलोकम्।।

(अथर्व 19/71/1)

अर्थात्, हे संस्कारित लोगों को पवित्र करने वाली वेद माता मुझे वर दो ताकि मैं लम्बी आयु, बल, (प्राण शक्ति), उत्तम संतान-पशु आदि, यश, धन, ब्रह्म (वेद) ज्ञान पाकर ब्रह्मलोक (मोक्ष-प्राप्ति) का अधिकारी बन सकूँ। वेद के एक-एक पद में, एक-एक शब्द में, एक-एक अक्षर में, उनके क्रमों में बड़ा विज्ञान निहित है। शास्त्र ने घोषणा की बुद्धिर्पूवाः वाक्य कृत्तिर्वेदाः।' अर्थात् वेद का प्रत्येक वाक्य बुद्धिपूर्वक है। मनु महाराज तो वेदों को परम प्रमाण मानकर कहते हैं:-

धर्म जिज्ञासमानाम प्रमाणं परमं श्रुति।

(1/132)

अर्थात् धर्म के जिज्ञासुओं के लिए इस विश्व में सबसे बड़ा प्रमाण परम श्रुति (वेद) है। मनु भगवान यह भी कहते हैं कि -

यस्तर्केण अनुसंधते सः धर्मम् वेदनेतर।

अर्थात् जो तक से अनुसंधान करता है वह ही धर्म के गूढ़ तत्व को जान सकता है।

अथर्ववेद इसलिए कह रहा है कि हे परम देव मुझे पहले दीर्घ आयु दे फिर स्वस्थ-सुन्दर मन, बुद्धि और इन्द्रियां दे। गृहस्थ आश्रम में मुझे उत्तम संतान मिले गौ, घोड़े आदि पशुओं का सान्निध्य हो। इस व्यक्तिगत व पारिवारिक सुख शांति के बाद मुझे चारों दिशाओं में यश कीर्ति मिले। कीर्ति के बाद मुझे धन की भी कोई कमी न रहे। कीर्ति और वैभव के पश्चात् मुझे (आता) ज्ञान मिले ताकि मैं बाद में ब्रह्मलोक का अधिकारी बन सकूं। वेद का उपदेश स्पष्ट है कि जो लोग धन के लिए अपने स्वास्थ्य, परिवार तथा कीर्ति को दांव पर लगाते हैं या उनकी उपेक्षा करते हैं, उन्हें बाद में पश्चाताप करना पड़ता है। धन (की अधिकता) ने कभी किसी को तृप्त नहीं किया। आत्म ज्ञान के लिए व्यक्ति को पहली सीढ़ियों से गुजरना है। यही बात तो यजुर्वेद के महामृत्युञ्जय मंत्र में और भी स्पष्ट रूप से कही गयी है-

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारूकमिव बन्धनात्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात।।

(यजु. 3/60)

अर्थात् हे सारे संसार को सुगन्ध व पुष्टि देने वाले प्रभु! मुझे खरबुजे की तरह बन्धन से, मृत्यु से छुड़ा कर अमृत को पान कराओ। खरबुजा तभी बन्धन से छुटता है जब वह पक जाता है और पकने के लिए उसे बेल से जुड़ना ही पड़ता है, वृद्धि व मिठास के लिए उससे रस लेना पड़ता है। ठीक इसी तरह से व्यक्ति को अपने विकास, मिठास तथा परिपक्वता के लिए सांसारिक बन्धनों से बचना आवश्यक है। नहीं तो विकास, मिठास व पूर्णता में कहीं कमी रह ही जायेगी। बिना इनके आत्म ज्ञान कैसे होगा और कैसे होगी मुक्ति की प्राप्ति?

योग शास्त्र में भगवान पतञ्जलि ने योग के लिए, आत्मज्ञान के लिए, अध्यात्म की उच्चता के लिए आठ अंगों का पालन आवश्यक बताया। बिना पांच यमों (सामाजिक अनुशासन) व पांच नियमों (व्यक्तिगत अनुशासन) के कोई भी व्यक्ति अध्यात्म की सीढ़ी पर नहीं चढ़ सकता। पूरा योग ही एक अनुशासन का नाम है। शासनदूसरों पर होता है पर अनुशासन का अर्थ अपने ऊपर-अपने मन व इन्द्रियों के ऊपर-शासन का नाम है।आज तो योग व अध्यात्म के नाम पर हजारों लोग योग शिक्षक बनकर अध्यात्म मार्ग का वस्तुतः उपहास कर रहे हैं। बिना यम नियमों के खान पान के नियन्त्रण के बिना भी आज के लोग मेडिटेशन (ध्यान कहना तो गलत ही होगा) , करके चन्द दिनों में विभिन्न प्रकार का प्रकाश देखने का आत्म ढोंग करते हैं।

ऋग्वेद भी प्रेरणा दे रहा है 'मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्' (10/53/6) अर्थात् मनुष्य बनो और देवताओं को पैदा करो। इंसानियत व देवत्व की प्राप्ति के लिए हमें प्रकाश (ज्ञान) के पीछे चलना होगा। रोशनी के रास्ते की रक्षा कर उसे आगे बढ़ाना होगा और यह सब दुनियां के ताने-बाने बुनते हुए, त्यागपूर्वक भोग करते हुए ज्ञान की मशाल हाथ में लेकर अज्ञान, अन्याय व अभाव के अंधकार को चीरना होगा। तभी हम आत्मज्ञान के अधिकारी बनेंगे और तभी अध्यात्म के दिव्य रस का पान हम कर सकेंगे।

मित्रों! यह देश आत्मज्ञान व आध्यात्मिक कारण से दुनियां का कभी सिरमौर था। यह तभी तक रहा जब तक वेद का दीपक घर-घर में जलता रहा। अपनी शांति के लिए, अपने बच्चों की समृद्धि के लिए, अपने देश की प्रगति के लिए आओ आज पुनः हम वेद की ज्योति घर-घर में पहुंचायें। जिस दिन वेद का अध्यात्म संसार में फैलेगा, तब लोगों के हृदयों से वैर, वैमनस्य दूर होकर तथा आतंकवाद और अपराध खत्म होकर विश्व एक कुटुम्ब बन पायेगा। एक नीड़ बन जायेगा।

भवत्येक नीड़म्।

- कृतिका, वॉटर फिल्ड सेड, भाभा हॉस्पीटल के सामने, बांद्रा (पश्चिम), मुम्बई-400050

वेद ज्ञान घर-घर पहुंचाएं, आज यही व्रत ठाना है

- ओमप्रकाश शास्त्री

ऋषियों के वंशज सब सुन लो, माता का मान बढ़ाना है।
वेद की वाणी घर-घर गूंजे, जो अनमोल खजाना है।।
ईश्वर का यह ज्ञान वेद है, सबके लिए बराबर है।
जिसने इसको अपनाया है, जीवन बना उजागर है।।
अज्ञान तमस को दूर भगाने हेतु प्रबल प्रभाकर है।
आज हमारा लक्ष्य यही है, वेदों का ज्ञान बढ़ाना है।।
वेद हमारे धर्म ग्रन्थ हैं, वेद हमारी थाती है।
इसके संरक्षण, चिन्तन मे मुनियों ने जान लुटा दी है।।
उज्ज्वल इसके श्रेष्ठ ज्ञान से, निज संस्कृति हर्षाती है।
इसकी शिक्षाओं पर चलकर, जीवन बने सुहाना है।।
वेद की वाणी कल्याणी है, मंगल वर्षा करती है।
दूध, पूत, धन और धान्य से, सबके घर को भरती है।।
जो भी इसकी शरण में आए, जीवन में रस भरती है।
वेद ज्ञान घर-घर पहुंचाएं, आज यही व्रत ठाना है।।

- यू.-128, शकरपुर, दिल्ली-92

जीवन वही सार्थक होता है जो परोपकार के लिए लगाया जाये

– स्वामी चन्द्रवेश

रक्षा बंधन के पवित्र पर्व पर अपने भाइयों से दूसरों की बहनो के सम्मान करने का संकल्प करवाएं सभी बहनें

– प्रवेश आर्या

(24 अगस्त 2015) : रक्षा बंधन का पर्व बहुत लंबे समय से भाइयों द्वारा बहनों की रक्षा करने के संकल्प के साथ मनाया जाता है। बहने अपने भाईयों की कलाई पर राखी का धागा बांधती हैं और उस समय भाई अपनी बहन के सम्मान व रक्षा का वायदा उस बहन को देता है। सभी हर वर्ष इसी तरह यह पर्व मनाते हैं। परन्तु अबकी बार बहनों को अपने भाइयों की कलाई पर राखी बांधते समय एक और संकल्प करवाना है कि वो वही सम्मान दूसरों की बहनों को भी दे जो वो आपको देता है। उनकी रक्षा के प्रति भी उतना ही जागरूक व सतर्क एवं सावधान रहे जितना वह तुम्हारे प्रति रहता है। तभी समाज में समता, सद्भावना व खुशी का माहौल बन पायेगा। ये आह्वान बेटी बचाओ अभियान की राष्ट्रीय संयोजक बहन प्रवेश आर्या ने बेटी बचाओ अभियान की कार्यकर्त्ता बहनों के माध्यम से पूरे देश की बहनों से किया। उन्होंने कहा कि आज बहनों को ही ये जिम्मेदारी लेनी होगी। हालाँकि ये बहुत छोटी सी बात दिखाई देती है परन्तु बहुत महत्वपूर्ण है। जिसका परिणाम जल्द व सकारात्मक दिखाई देगा।

स्वामी इंद्रवेश विद्यापीठ टिटौली, जिला रोहतक में आयोजित इस बैठक के बाद पौधारोपण भी किया गया।

बेटी बचाओ अभियान की राष्ट्रीय प्रधान बहन पूनम आर्या ने सभी से आह्वान भी किया और कहा कि जिस तरह से यज्ञ से प्राणीमात्र का लाभ होता है उसी तरह पौधारोपण से भी होता है। क्योंकि जीवन जीने के लिए मकान से पहले ऑक्सीजन चाहिए और वह पौधों के माध्यम से मिल सकती है। पौधे लगाने के साथ–साथ उनकी पूरी देखभाल करने व उनको बड़ा करने के प्रति भी पूरी सजगता बरतनी चाहिए।

उन्होंने कहा के अब पूड़ियों के लिए नहीं पीढ़ियों के लिए काम करना है। अर्थात ऐसे कार्य करने हैं कि आने वाली पीढ़ियां भी सुख व चैन से रह सकें। यदि हमारे बुजुर्ग हमारे लिए पेड़ नहीं लगाते तो आज हम न तो फल और न ही साफ व स्वच्छ हवा का लाभ ले सकते थे।

स्वामी इंद्रवेश विद्यापीठ (आश्रम) के आचार्य स्वामी चन्द्रवेश ने कहा कि जीवन वही सार्थक होता है जो परोपकार के लिए लगाया जाये।

हांसी (हिसार) में सहायक रोजगार अधिकारी कुमारी शशि ने कहा कि आज बहनों के सामने जो चुनौतियाँ हैं उनको अवसर में बदलकर सफलता हासिल करनी हैं।

इस अवसर पर आर्य युवक परिषद् हरियाणा के प्रधान ब्र. दीक्षेंद्र आर्य, वीरेंद्र शास्त्री, इंदु आर्या, सुषमा आर्या, प्रदीप कुमार, अजय कुण्डू, राजबीर वशिष्ठ, मोनू आर्य, सतेंद्र कुमार सहित बेटी बचाओ अभियान की टीम उपस्थित रही।

Vedic Concept of Creation

- Satyakam Vidyalankar

The theory of evolution is one of the greatest revelations of modern scientific thought. Various philosophers, physicists and scientific men, working independently of one another and in different domains of Nature, have, established the truth of this theory, so that instead of remaining a theory, there are evident signs of its soon becoming a proven fact. The theory enunciates the great truth, that all complexity came out of simplicity heterogeneity out of homogeneity, perfection out of imperfection, variety out of uniformity. All this beauty and grandeur with apparent paradoxes is the result of the struggle which Nature wages towards the attainment of order and perfection.

In the beginning of the present order of things, in some far-off period, in some distant point of time, the whole universe existed in a state of paramanu (atoms), invisible, subtle and unmanifested. That which we know as the earth, the sun, the moon and the stars was then, in the beginning of the kalpa, but formless matter in its most elemental and attenuated condition- ether, no doubt our ancient Aryan philosophers called it-non-being (asat). We involuntarily exclaim with our glorious Rishis:- "Before, O Child, this was a mere state of non-being (asat), one only, without a second. Thereof verily others say: Before this was non-being, one alone, without a second, from that non-being proceeds the state of being."

There is nothing, therefore, inappropriate in the name which the ancients gave this ether-spirit, viz., the anima mundi-the divine inflatus, the Hiranyagarbha. The Aryan title Hiranyagarbha-the womb of light-is far more expressive and scientific than the name ether.

The Evolution of Heat and Light

In the beginning, there was neither nought nor aught.

Then there was neither sky nor atmosphere above.

What then enshrouded all this universe?

In the receptacle of what was it contained?

Then was there neither death nor immortality,

Then was neither day, nor night, nor light, nor darkness,

Only the Existent One breathed calmly, self-contained.

(Rig. 10.121.1)

First in the beginning, therefore, was this Hiranyagarbha, one only without a second. The next step towards evolution was the generation of heat. The atoms of ether came closer together and united in different proportions and formed molecules. Thus the various elements were first evolved out of the homogeneous atoms of ether. This union and contraction, gave rise to a great deal of heat.

This intense heat raised the elements to a state of gaseous incandescence, and the whole mass would be now a luminous vapour of all elements, iron, gold etc. This self-luminous vapour has been called by the Aryan Rishis Prajapati (the Lord of all creations) and modern scientists have called such incandescent vapours nebulae (clouds), from their resemblance to white clouds. Thus, there arose light where there was formerly only darkness.

The findings of astrophysicists of today have now reaffirmed the statements of the Vedic declarations, with the help of every sophisticated and ultra-modern scientific equipment. They have gathered information about the circulation of energy and material in space. Astrophysicists are studying how the universe began. Did it all begin with a terrific explosion, the "big-bang"? With the aid of the radio telescopy, the scientists in Effelsberg can pick up signals that were sent 15,000 million years ago-when the "big-bang" is believed to have taken place. From these signals and what is now going on in space, it is possible to look back to the beginning of evolution, as if through a window in time: one can reconstruct the "big-bang".

Dr. Schmid-Burgk describes what is supposed to have taken place: "The cosmic material was originally densely packed and very hot. Because of the high temperatures, the atoms had been broken down into nuclei and electrons; even earlier, the nuclei of the atoms had been reduced to their elements, the protons and neutrons. During the hottest moments, the first few fractions of microseconds of the "big-bang', not even individual protons and neutrons could exist, but only what they are made up of, the quarks." The signals from space, however, also tell how the universe cooled down, expanded, how stars were born and died. With the passage of billions and billions of years, the time lapse has resulted slowly but surely in the loss of heat, the cooling down of planets which were all a part of the "Fire ball" once.

The moon was also at one time a part of the earth, and of course being but a smaller body, it has lost almost all its heat. The sun, which was the nucleus of the primitive rotating nebula, still retains a great deal of its heat, but it is not so intense as it must have been in the beginning. However, a time will come when the sun will cool down to darkness and no more be a fountain of light and heat to its planets, when there will be perfect darkness and intense cold-in fact, when this present cycle will come to an end. Long, long before that time arrives, this our earth will become a desolate wilderness-lifeless, silent and obscure. Seas, rivers, lakes, and oceans will be congealed to ice, even the very air will be a mass of solid. That time, according to Aryan calculation, is 2,333,227,018 years distant.

Modern scientific findings have reaffirmed the statement of this Vedic declaration.

आर्य आदर्शों के प्रतीक योगीराज श्रीकृष्ण

– डॉ. भवानीलाल भारतीय

मनुष्य अपनी विविध प्रवृत्तियों को उन्नति के सर्वोच्च सोपान पर पहुंचा कर किस प्रकार एक साधारण मानव से महामानव के उच्च पद पर प्रतिष्ठित हो सकता है, इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण कृष्ण का जीवन है। कारागार की विवशतापूर्ण परिस्थितियों में जन्म लेकर भी कोई मनुष्य संसार का महत्तम नेता किस प्रकार बन जाता है यह कृष्ण चरित्र में देखिए।

बंकिम के अनुसार श्री कृष्ण ने अपनी ज्ञानार्जनी, कार्यकारिणी और लोकरंजनी तीनों प्रकार की प्रवृत्तियों को विकास की चरम सीमा तक पहुंचा दिया था, तभी उनके लिए यह सम्भव हो सका कि वे अपने समय में महान् राजनीतिज्ञ और समाज व्यवस्थापक के गौरवान्वित पद पर आसीन हो सके।

बाल्यावस्था से लेकर जीवन के अन्तिम क्षण तक कृष्ण उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होते रहे। उनका एकमात्र उद्देश्य रहा, धर्म के अनुसार लोगों को अपने-अपने कर्तव्यों के पालन में रत रखना। वे स्वयं धर्म में अनन्य निष्ठा रखने वाले और उसके वास्तविक रहस्य को जानकर उसका उपदेश देने वाले महान् धर्मोपदेष्टा थे। ऋषि दयानन्द ने तो यहां तक कह दिया है कि श्रीकृष्ण ने जन्म से मरण पर्यन्त कुछ भी बुरा काम नहीं किया। यह सब कुछ धर्म के कारण ही सम्भव हुआ, और तभी तो महाभारतकार ने लिखा- ''यतो कृष्णस्ततो धर्मो यतो धर्मस्ततो जयः।''

जहां कृष्ण हैं, वहां धर्म है और जहां धर्म है वहां जय है संजय ने भी इसी प्रकार गीता के अन्त में कहा -

''यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीविजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।। (गीता 1878)

''जहां योगेश्वर कृष्ण और गाण्डीवधारी अर्जुन हैं, वहीं श्री है, वहीं विजय है। अधिक क्या कहें वही विभूति और अचल नीति है।'' ये उक्तियां कृष्ण को ईश्वरावतार मानकर नहीं कही गई है। यदि ऐसा होता, तो इनका कुछ भी मूल्य नहीं होता। ये कृष्ण की सर्वोपरि मानवीय भावनाओं को ही प्रकाशित करती हैं, जिनकी चरम साधना के कारण कृष्ण साधारण मानव की कोटि से उठकर महापुरुषों की श्रेणी में आये, योगेश्वर और योगिराज बने।

बाल्यकाल से ही देखिए। एक दृढ़ विचार वाले पुष्ट शरीर वाले और स्वस्थ मन तथा बलवान् आत्मा वाले ब्रह्मचारी में जो-जो विशेषताएं होनी चाहिए वे हमें कृष्ण में मिलती हैं। उनका शारीरिक बल एक अनुकरणीय वस्तु है, जिससे उन्होंने बाल्यकाल में ही अनेक त्रासदायक और हिंसक जन्तुओं का वध किया। समय आने पर उन्होंने युद्ध कौशल और रणनीति का सांगोपांग अध्ययन किया। युद्धनीति के वे कितने प्रकाण्ड पण्डित थे, यह तो इसी से ज्ञात हो जायेगा कि अर्जुन और सात्यकि जैसे वीर उनके शिष्य थे, जिनको उन्होंने युद्ध विद्या सिखाई थी। गदा-युद्ध के वे अच्छे ज्ञाता थे। निर्भयता, निडरता और चातुर्य के तो वे भण्डार ही थे।

शारीरिक बल के अतिरिक्त उनका शास्त्रीय ज्ञान भी बढ़ा चढ़ा था। वे वेदों और वेदांगों के ज्ञाता थे, यह हमें भीष्म की उक्ति से ज्ञात होता ही है। साथ ही साथ वे चिकित्सा, विद्याओं के भी पण्डित थे। मृतप्राय उत्तरा के बालक को जीवन प्रदान करना, मुरलीवादन कर सबके मन को मोहित करना तथा अर्जुन के सारथी बनकर भयंकर युद्धक्षेत्र में अपने रथी की रक्षा करना आदि उदाहरण इन बातों को सिद्ध करने के लिए उपस्थित किये जा सकते हैं। शारीरिक बल और मानसिक शक्तियों का उन्होंने चरम विकास किया था। परन्तु आचार की दृष्टि से भी उनकी बराबरी उस समय का कोई पुरुष नहीं कर सकता था। वे महान् सदाचारी और शीलवान् पुरुष थे। माता-पिता की आज्ञा पालन और उनके प्रति सदा पूज्य भाव रखने के गुण को उन्होंने कभी विस्मृत नहीं किया। वे मादक द्रव्यों तथा द्यूत बुराइयों से सदा दूर रहते थे। यहां तक कि उन्होंने समय-समय पर यादवों में ये आज्ञाएं प्रचारित करा दी थीं कि कोई जन यदि मदिरा पियेगा तो राज्य की ओर से दण्डनीय होगा। ब्रह्मचर्य के विषय में कहा जा सकता है कि एक पत्नीव्रत का पालन करते हुए भी उन्होंने सपत्नीक बारह वर्ष के ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। तदनन्तर उनके प्रद्युम्न जैसा पुत्र उत्पन्न हुआ, जो रूप, गुणशील और आचार में सर्वथा अपने पिता के ही तुल्य था। पुराणकारों ने उनके चरित्र के इस पहलू को सम्पूर्णतया विस्मृत कर दिया है।

श्री कृष्ण सन्ध्या और अग्निहोत्र आदि दैनिक कर्तव्यों के पालन में कभी प्रसाद नहीं करते थे। महाभारत में स्थान-स्थान

पर इसके उल्लेख मिलते है। दुर्योधन से सन्धिवार्ता के लिए जाते हुए कृष्ण जब-जब प्रातःकाल या सायंकाल होता है, तब-तब वे सन्ध्या और अग्निहोत्र करना नहीं भूलते। महाभारत में लिखा है -

प्रातरुत्थाय कृष्णस्तु कृतवान् सर्वआहिकम्।
ब्राह्मणैर भ्यनुज्ञातः प्रययौ नगरं प्रति।।
(म. भा. उद्योगपर्व 5, 87, 1)

प्रातःकाल उठकर कृष्ण ने आहिक (सन्ध्या-हवन) आदि क्रियाएं की, पुनः ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर नगर की ओर गए। इस प्रकार का एक अन्य श्लोक है -

कृत्वा पौर्वाहिकं कृत्यं स्नातः शुचिरलङ्कृत।। उपतस्थे विवत्वन्तं पावकं च जनार्दनः।।
(म. भा. उद्योगपर्व 5, 81, 9)

''स्नान करके प्रातःकाल की आहिक क्रियाएं की ..... आदि।'' अब इसे विडम्बना के अतिरिक्त और क्या कहें कि नित्य सन्ध्या योग के द्वारा सच्चिदानन्द ब्रह्मा का ध्यान करने वाले और अग्निहोत्र के द्वारा देवताओं का यजन करने वाले, आर्य मर्यादा पालक, आदर्श महापुरुष कृष्ण को लोगों ने साक्षात् ईश्वर ही बना दिया।

कृष्णचरित्र की सर्वोपरि विशेषता उनकी राजनैतिक विचक्षणता और नीतिज्ञता है। उनका राजनीति के प्रति यह अनुराग किसी स्वार्थ की भावना से प्रेरित नहीं था, जैसा कि आजकल एक अनेक राजनैतिक नामधारी पुरुषों में दिखाई पड़ता है। और न ही उनकी राजनैतिक विचारधारा किसी संकुचित राष्ट्रीयता के सीमाक्षेत्र में बंधी हुई थी। उस समय वर्तमान युग में व्यापक सीमित राष्ट्रीय भावना का तो जन्म ही नहीं हुआ था। कृष्ण के इस क्षेत्र में प्रवेश करने का एकमात्र उद्देश्य था लोक कल्याण, विश्व कल्याण और अराजकता को मिटाकर आर्यविधि का संस्थापन। लोकोपकार की यही भावना लेकर वे इस क्षेत्र में प्रविष्ट हुए।

सर्वप्रथम उनकी दृष्टि अपने ही मथुरा जनपद के स्वेच्छाचारी, एकतंत्रशासन के प्रतिनिधि राजा कंस के ऊपर गई। उन्होंने पारिवारिक और व्यक्तिगत सम्बन्धों का विचार न करते हुए यादवों के हित को सर्वोपरि समझा और कंस के विनाश में ही सबका कल्याण देखा। कंस की मृत्यु के पश्चात् ही मथुरा के यादवों को अपनी सर्वांगीण उन्नति करने का अवसर मिला। कृष्ण का अभी एक कार्य पूर्णतया समाप्त भी न हुआ था कि जरासंध के आक्रमण होने प्रारम्भ हो गये। कंस के मारे जाने से जरासंध ने अनुमान लगा लिया था कि अब अधिक दिनों तक आर्यावर्त में अत्याचार, स्वेच्छाचार और अराजकता का राज्य नहीं चल सकता; क्योंकि कृष्ण के रूप में सदाचार, स्वतन्त्रता, मर्यादा और धर्म, नीति तथा समाज का संरक्षक एक महान् लोकनायक उत्पन्न हो चुका था। कंस भी तो आखिर जरासन्ध का ही जमाता और उसी का अनुगामी था। कंसवध की घटना में जरासन्ध ने अपनी नीत और हथकण्डों को पराजित होते देखा। वह तुरन्त मथुरा पर चढ़ दौड़ा और एक बार ही नहीं, सत्रह बार उसने आक्रमण किए। कृष्ण के अपूर्व रणचातुर्य और उनके सफल सेनापतित्व में यादवों ने जरासन्ध की सेना के दांत खट्टे कर दिये। परन्तु जब कृष्ण ने ही यह समझ लिया कि शूरसेन प्रदेश सुरक्षा की दृष्टि से अधिक उत्तम नहीं है, तो उन्होंने यादव जाति के निवास के लिए द्वारिका जैसा भौगोलिक दृष्टि से सुदृढ़ आवासस्थान ढूंढ़ निकाला।

जरासन्ध के सेनापति शिशुपाल को प्रथम तो रुक्मिणी के विवाह के अवसर पर कृष्ण के द्वारा नीचा देखना पड़ा और द्वितीय बार जब राजसूय यज्ञ के प्रसंग में उसने अर्घ्य के पचड़े को लेकर यज्ञध्वंस करने और कृष्ण के किये कराये पर पानी फेरने का विचार किया तो उसे यमलोक पहुंचाकर कृष्ण ने अपने 'विनाशाय च दुष्कृताम्' रुपी महायज्ञ में एक और आहुति प्रदान की। जरासन्ध को समाप्त करने का अवसर इससे पूर्व ही उपस्थित हो गया था। 86 राजाओं को कैद कर और उनकी महादेव के सम्मुख बलि देने का जो पैशाचिक षडयन्त्र जरासन्ध ने कर रखा था, उसे कृष्ण जैसे धर्मात्मा कैसे सहन कर सकते थे? इस दुष्कृत्य में तो उसके समस्त अत्याचारों की चरम परिणति हो गई थी, अतः उसे सहन करना सर्वथा असम्भव था। ऐसा मनुष्य जाति का शत्रु जरासन्ध कृष्ण की नीति और चतुराई से भीम द्वारा मारा गया। न तो युद्ध करना पड़ा और न रक्तपात। सब काम शान्तिपूर्वक हो गया।

महाभारतीय युद्ध में भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य दुर्योधन आदि कौरव पक्ष के सभी महारथी वीरों का अन्त एक-एक

आर्य आदर्शों के प्रतीक योगीराज श्रीकृष्ण

करके हुआ और इस प्रकार कृष्ण के इस धर्म संस्थापन रूपी महायज्ञ में पूर्णाहुति लगी। युधिष्ठिर के धर्मराज्य संस्थापन के कार्य में श्रीकृष्ण का योगदान तो सर्वविदित ही है। कृष्ण की इस अपूर्व नीतिज्ञता और रणचातुरी से यह अनुमान लगाना कि वे युद्धलिप्सु थे अथवा समस्त देश को युद्ध की भयंकर और विनाशकारी ज्वालाओं में झोंककर तमाशा देखने वाले थे, अनुचित होगा। कृष्ण ने यथाशक्य युद्ध का विरोध किया, यह हम प्रत्येक प्रसंग में देखते हैं। उन्होंने न तो युद्ध को समस्या सुलझाने का एकमात्र उपाय ही समझा और न उसमें कूद पड़ने के लिए किसी को उत्साहित ही किया। यहां तक कि वैयक्तिक मानापमान की परवाह न करते हुए भी वे सन्धि का सन्देश लेकर हस्तिनापुर गये और चाहे उसमें उन्हें सफलता न भी मिली, परन्तु संसार को ज्ञात हो गया कि महात्मा कृष्ण सन्धि के लिए प्रयत्नशील थे और सन्धि के ही आकांक्षी थे। उन्होंने स्वयं कहा है कि वे इस पृथ्वी को युद्ध की विभीषिका से बचा हुआ ही देखना चाहते हैं।

यह ठीक है कि दुर्योधन की कुटिलता से उनकी बात नहीं मानी गई और युद्ध अपरिहार्य हो गया। परन्तु लोग यह भी जान गये कि पाण्डवों का पक्ष सत्य का है और दुर्योधन हठवंश मानव जाति के सर्वनाश में प्रवत्त हो रहा है। यह महत् कार्य कृष्ण की अपूर्व दूरदर्शिता और विलक्षण मेधावी बुद्धि से ही सम्पन्न हुआ। युद्ध प्रारम्भ होते ही उनका दृष्टिकोण बदल गया। अब वे युद्ध को क्षत्रियों के लिए खुला हुआ स्वर्ग का द्वार बतलाते हैं और उनका विश्वास है कि आततायियों का विनाश किये बिना कार्य नहीं चल सकता। रणक्षेत्र में उपस्थित होते ही अर्जुन में जो क्लीबता और हृदय दौर्बल्य उत्पन्न हो गया था। उसे महाराज श्रीकृष्ण ने अनाथों के उपयुक्त तथा स्वर्ग और कीर्ति का नाश करने वाला बतलाया। वास्तव में क्षात्र धर्म का यही प्राकृत रूप था, जिसे श्रीकृष्ण ने अत्यन्त ओजस्वी और प्रभविष्णु ढंग से निरूपित किया और जो आज विश्व के सम्मुख "गीता" के नाम से विद्यमान है।

यह है श्रीकृष्ण की राजनीतिज्ञता का किन्चित् दिग्दर्शन। उन्होंने जहां अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्वपूर्ण प्रश्नों को सुलझाने में अपने जीवन का अधिकांश भाग लगाया, वहां उन्होंने सामाजिक प्रश्नों की भी अवहेलना नहीं की। श्री कृष्ण वर्णाश्रम धर्म के सबसे प्रबल समर्थक और शास्त्रीय मर्यादा के रक्षक थे। परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि वे किसी प्रकार की सामाजिक कट्टरता या अनुदारता के पोषक और गतानुगतिकता के समर्थक थे। उनकी सामाजिक धारणाएं उदारपूर्ण और नीतियुक्त होती थीं। उन्होंने सदा दलित और पीड़ित वर्ग का पक्ष ग्रहण किया। विदुर जैसे धर्मात्मा लोगों का उन्होंने सदा सम्मान किया। नारी वर्ग के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी। कुन्ती, गान्धारी, देवकी आदि पूजनीय, गरीयसी महिलाओं तथा सुभद्रा, द्रौपदी आदि कनिष्ठा देवियों के प्रति उनके हृदय में सदा श्रद्धा, सम्मान और आदर के भाव रहे। जानते थे कि मातृशक्ति का यथोचित सम्मान करने से ही देश की भावी सन्तान में श्रेष्ठ गुणों को लाया जा सकता है।

कृष्ण के व्यक्तित्व के इन विविध रूपों की समीक्षा कर लेने के पश्चात् भी उनके चरित्र की उस महनीयता और उदारता की ओर ध्यान आकृष्ट कराना आवश्यक है, जिसके कारण आध्यात्मिक क्षेत्र के महान् उपदेष्टा और योगेश्वर के रूप में उनका सर्वत्र सम्मान हुआ, हो रहा है और जब तक संसार में आर्य संस्कृति का कोई भी अनुयायी रहेगा, तब तक होता रहेगा। कृष्ण राजनीतिज्ञ भी थे, धर्मोपदेष्टा भी थे, परन्तु वास्तव में वे योगी थे और थे अध्यात्म पथ के अपूर्व साधक। उन्होंने कर्मयोग का ही उपदेश दिया और अपने जीवन में आचरण के द्वारा उसे ही प्रत्यक्ष कर दिखलाया।

वे ज्ञान और कर्म के समन्वय के पक्षपाती थे। यही आर्य संस्कृति और परम्परा की विशेषता है, जो कृष्ण के व्यक्तित्व में साकार हो उठी थी। सच्चिदानन्द के परम तत्व का साक्षात्कार कर लेने के बाद भी वे लोकमार्ग से च्युत नहीं हुए। क्योंकि वे गीता में कह चुके हैं कि पूर्णकाम हो जाने के पश्चात् भी योगी को कर्तव्य कर्म करने से विराम नहीं लेना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने कर्मठ जीवन का पाठ पढ़ाया परन्तु साथ ही यह भी कहा कि हम अपने स्वरूप को समझे और योगी की भांति निष्काम भाव से कर्तव्य पालन में दत्तचित्त हों। यही श्रीकृष्ण के उपदेशों का सार है और यही उनके जीवन की महती सफलता का एकमात्र कारण है।

जीवन की इस विविधता और सर्वांगीणता के कारण कृष्ण चरित्र का स्थान, संसार में अद्वितीय है। स्वदेश ही क्या, विदेशों, में भी ऐसे सर्वगुण सम्पन्न महापुरुष का जन्म नहीं हुआ। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के साथ अवश्य उनकी तुलना की जा सकती है परन्तु राम और कृष्ण के जीवन और उनकी परिस्थितियों में अन्तर था। राम स्वयं आदर्श राजा थे, परन्तु राजाओं के निर्माण एवं स्वयं सत्ता से दूर रहने वाले महापुरुष थे। राम के समक्ष वे कठिनाइयाँ नहीं थी, जो कृष्ण के समक्ष थीं। अतः किसी भी दृष्टि से क्यों न देखा जाये, कृष्ण के तुल्य मानव भूमण्डल में अद्यतन नहीं हुआ, यह निश्चित ही है।

श्री कृष्ण! कहाँ तुम चले गए?

– पं. नन्दलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य

व्याकुल है जनता सारी, श्री कृष्ण कहां तुम चले गये?
हे चक्रसुदर्शनधारी! श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
वैदिक मर्यादा का पालन, करना सबने छोड़ दिया।
पश्चिमी सभ्यता संस्कृति से, पक्का नाता जोड़ लिया।।
अन्याय गया बढ़ भारी, श्री कृष्ण कहां तुम चले गए?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
पत्नी थी रुकमणि आपकी, जो थी पतिव्रता नारी।
बलशाली प्रद्युम्न पुत्र था, ईश भक्त वेदाचारी।।
हम सब तुम पर बलिहारी श्री कृष्ण कहां तुम चले गए?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
दूध, दही, घी, मक्खन केशव! तुम खुश होकर खाते थे।
प्रेममयी मन मोहक वंशी, मोहन आप बजाते थे।।
अब नफरत की बीमारी, श्री कृष्ण! कहाँ तुम चले गये?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
हे! गोपाल आपने तो, जीवनभर गऊ चराईं थीं।
लाखों ललनाएँ मिटने से, तुमने नाथ बचाई थीं।।
अब गऊए- जातीं मारी, श्री कृष्ण! कहाँ तुम चले गए?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
कंस और शिशुपाल दुष्ट को, तुमने मार गिराया था।
जरासंघ को भीमसेन पर, कुश्ती में मरवाया था।।
गुण गाते हैं नर-नारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
चोर-जार, डाकू-गुण्डा, तुमको कुछ धूर्त बताते हैं।
दोष लगाते हैं पाखण्डी, तनिक नहीं शर्माते हैं।।
जो खुद हैं भ्रष्टाचारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??
अमरीका, इंग्लैण्ड, चीन, भारत पर रौब जमाते हैं।
पाकिस्तानी, बंगलादेशी, झगड़े रोज कराते हैं।।
कह "नन्दलाल" प्रचारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए?
हे चक्रसुदर्शनधारी, श्री कृष्ण! कहां तुम चले गए??

– ग्राम व पो.-बहीन, जनपद-पलवल (हरियाणा),
मो.:-9813845774

'योगेश्वर श्रीकृष्ण' पुस्तक छपकर तैयार

– लेखक स्व. पं. चमूपति एम. ए.

'योगेश्वर श्रीकृष्ण' नामक पुस्तक पृष्ठ संख्या–256, अच्छे जिल्द एवं कागज में छपकर तैयार है। जिसकी कीमत 100/: रुपये है, जिस पर 25 प्रतिशत छूट उपलब्ध है। परन्तु भेजने में डाक व्यय खर्च होता है। अतः एक पुस्तक मंगाने के लिए डाक व्यय सहित 100/– रुपये भेजकर मंगा सकते हैं।

प्राप्ति स्थान – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, "महर्षि दयानन्द भवन"
3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–2
दूरभाष :–011–23274771, 23260985

100 वर्ष तक जीने के सूत्र

– मधुर प्रकाश शास्त्री

बीमारी एक अस्वाभाविक क्रिया है जो आहार-विहार में गड़बड़ी से प्रकृति की व्यवस्था के उल्लंघन से उत्पन्न होती है। आरोग्य आहार-विहार के संयम से आता है, बहुमूल्य आहार एवं औषधियों से नहीं।

- रात में सोने से पूर्व व प्रात:काल उठकर शौच करने के बाद ब्रश, दातुन अवश्य करें। कुछ भी खाने के बाद कुल्ला (नमक के पानी से) अवश्य करें।
- भोजन करने के दस मिनट बाद, दोनों समय, मूत्र त्याग अवश्य करें। ऐसा करने से मूत्र व अन्य सम्बन्धित विकारों से बचा जा सकता है।
- भोजन हमेशा तभी करें जब बहुत तेज भूख लगी हो। भूख से थोड़ा कम ही खाएं। भोजन सात्विक, शुद्ध पदार्थों से ही निर्मित करें।
- अधिक तीखा, खट्टा, मसालेदार, चिकनाई युक्त भोजन स्वास्थ्य का शत्रु है।
- भोजन में सलाद, कच्ची व हरी सब्जियाँ, दूध, दही, फल सभी वस्तुओं को थोड़ा-थोड़ा शामिल करें।
- आहार को अधिक पीसने तलने, भूनने से उसके स्वाभाविक गुण नष्ट हो जाते हैं। दाल, शाक़, फल छिलके सहित खायें।
- अंकुरित दालें, चना, गेहूं में थोड़ा सा नींबू, टमाटर, हरी मिर्च व बहुत हल्का नमक मिलाकर खायें तो स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छा रहता है। मांसपेशियाँ पुष्ट होती हैं और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है।
- सब्जियों को काटने से पहले ही अच्छी प्रकार धो लें। फिर काटने के बाद भी दो बार धोएं। दालों को ठीक से बीनकर बनायें।
- सप्ताह में एक दिन उपवास रखें। उपवास वाले दिन नींबू, छाछ, दूध, फल, सलाद आदि ही लें। गरिष्ठ भोजन या नित्य प्रति लिया जाने वाला भोजन दिन में एक बार भी न करें। पानी खूब पीयें।
- भोजन करते समय व भोजन से आधा घंटा पूर्व तथा एक घंटे बाद तक जल न पियें। पीना भी पड़े तो एक-दो घूंट ही पीयें।
- भोजन के साथ जल के स्थान पर दही, मट्ठा, छाछ, जूस, फल अथवा सब्जी कोई ले सकते हैं।
- शरीर के कल-पुर्जों को चुस्त-दुरुस्त रखने के लिए नियमित व्यायाम आवश्यक है।
- कभी भी भोजन करने के फौरन बाद स्नान न करें। खाली पेट भी भोजन के तीन घंटे बाद ही स्नान करें।
- प्रात:काल भारी नाश्ता वे ही लें जिन्हें दिन भर कठोर शारीरिक श्रम करना है।
- नींद कम से कम 6 घण्टे की आवश्यक है।
- चालीस वर्ष की उम्र के बाद वर्ष में एक बार अपने पारिवारिक या किसी विशेषज्ञ चिकित्सक से सलाह करके अपनी सभी रक्त, मलमूत्र, हृदय, आंखें, फेफड़ों, गुर्दों आदि की जांच अवश्य करा लेनी चाहिए।
- जिस घर में रहें उसके कमरे हवादार व रोशनीयुक्त होने चाहिए।
- शरीर में उत्पन्न होने वाले वेग - मल, मूत्र, छींक, प्यास, भूख, नींद, आंसू आदि को रोकना नहीं चाहिए।
- प्रात:काल चार-पांच बजे के मध्य उठ जायें। रात में 10 बजे तक सो जायें।

- 2804, बाजार सीताराम, दिल्ली-110006
मो.:-9810431857

युवा संस्कार अभियान के अवसर पर यज्ञ करते हुए
के.आ.यु. परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. अनिल आर्य तथा अन्य

आर्य समाज डालीगंज शताब्दी समारोह
दिनांक 18 से 20 सितम्बर, 2015

स्थान - छत्रपति शिवाजी सभागार, रामाधीन सिंह कालेज, आई.टी. चौराहा, लखनऊ

इस शुभ अवसर पर आर्य जगत के सुप्रसिद्ध संन्यासी, विद्वान, विदुषियां एवं भजनोपदेशक पधार रहे हैं। आर्य नेताओं में श्री देवेन्द्र पाल वर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उ. प्र. तथा सभा मंत्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती महाराज की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। आर्य नेता श्री आनन्द कुमार आर्य एवं देश के प्रसिद्ध राज नेतागण भी पधार रहे हैं। विद्वानों में स्वामी आर्यवेश, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली, राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त प्रो. प्रशस्यमित्र शास्त्री, डॉ. प्रियंवदा वेदभारती, सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक डॉ. कैलाश कर्मठ, सत्य प्रकाश आर्य, सिनेवादक पं. सीताराम शर्मा आदि की स्वीकृति है। इस समारोह में वैदिक यज्ञ, वेद व विज्ञान सम्मेलन, महिला तथा राष्ट्ररक्षा सम्मेलन एवं युवा स्वास्थ्य और योग सम्मेलन आदि आयोजित होंगे।

नोट : पुस्तक विक्रेतागण एवं समागत सभी आर्यजनों के लिए आवास एवं भोजन की व्यवस्था है। कृपया आने की सूचना दें।

- सूर्य कुमार वर्मा 'सूरज' पार्षद, स्वागताध्यक्ष

आर्य समाज मंदिर मण्डी (हि. प्र.)
श्रावणी पर्व (वेद सप्ताह)

मान्यवर,

हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी श्रावणी पर्व (वेद सप्ताह) का पावन आयोजन रक्षा बंधन 29 अगस्त से 2 सितम्बर, 2015 तक निम्न कार्यक्रमानुसार बड़ी श्रद्धापूर्वक मनाया जा रहा है। इस पावन अवसर पर प्रख्यात वेद प्रवक्ता डॉ. ओमव्रत आचार्य जी गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर, हापुड़ (उ. प्र.) वेद ज्ञान प्रवाहित करेंगे तथा भजनोपदेशक पं. श्री प्रताप सिंह आर्य अपने सुमधुर भजनों से वातावरण को भक्तिमय बनायेंगे। सभी धर्मप्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि इस पवित्र वेद सप्ताह श्रावणी पर्व पर ईष्ट मित्रों तथा सपरिवार भाग लेकर अपने तन-मन को पवित्र करें।

कार्यक्रम

29 अगस्त से 2 सितम्बर, 2015

चतुर्वेद शतकम यज्ञ भजन प्रवचन

प्रात: 7.30 से 9.30 बजे तक एवं रात्रि 7.00 से 9.00 बजे तक भजन प्रवचन

2 सितम्बर, 2015

प्रात: 9.00 से 12.00 बजे तक ..... यज्ञ, पूर्णाहुति, आर्शीवाद, प्रसाद वितरण, भजन, प्रवचन, उपरान्त ऋषि लंगर।

- निवेदक, कार्यकारिणी, आर्य समाज, मण्डी, दूरभाष :- 01905-225658

ताड़केश्वर महादेव मन्दिर पर दूध व्यर्थ बहने से बचाने हेतु
आर्य समाजियों ने किया जागरूक

जयपुर : 17 अगस्त, 2015, गरीब बच्चों का निवाला दूध व अमृत समान जल आस्था के नाम पर बहाना विकृत भक्ति है। उक्त कथन सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के प्रदेशाध्यक्ष यशपाल 'यश' ने चौड़ा रास्ता स्थित ताड़केश्वर मन्दिर पर श्रद्धालुओं को समझाने के लिए आयोजित कार्यक्रम में कहे।

आर्य समाज जयपुर दक्षिण, सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् व अन्य आर्य संस्थाओं की ओर से डी. के. गुप्ता, जसवंत राय, डॉ. सुभाष गोयल, सतीश मित्तल, रमेश धीक, दिनेश मोदी, हरिचरण सिंघल, पवन आर्य, अमर सिंह, नितिन आदि ने 2 घण्टे तक पत्रक वितरण कर बहते दूध से होने वाली कीचड़ दुर्गन्ध व बीमरियों से बचने का आह्वान किया।

दूध चढ़ाने को अनुचित मानते हुए मंदिर महंत ब्रह्मराज ने अगले श्रावण माह पूर्व जल पुन: भरण का आश्वासन दिया तथा कुछ दूध एकत्रित कर उपभोग में लेने की बात भी कही।

आर्य संस्थाओं का जन-चेतना अभियान अंतिम सोमवार 24 अगस्त तक जारी रहा। झारखण्ड मंदिर पर सद्बुद्धि यज्ञ हुआ।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा
25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की महत्त्वाकांक्षी योजना

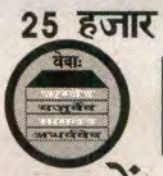

घर-घर तक पहुँचाई जायेगी परमात्मा की वेद वाणी

चारों वेदों का सम्पूर्ण हिन्दी भाष्य

लागत मूल्य 3100/- रुपये

(महर्षि दयानन्द, तुलसीराम स्वामी एवं पं. क्षेमकरण दास कृत)

(10 खण्ड, 9 जिल्दों में)

भारी छूट पर उपलब्ध

एक लाख रुपये अग्रिम देने वाले महानुभावों का चित्र तथा संक्षिप्त परिचय वेद सैट में प्रकाशित किया जायेगा तथा दस वेद सैट उन्हें नि:शुल्क प्रदान किए जायेंगे।

3100/- रुपये का एक वेद सैट 25 प्रतिशत की छूट पर उपलब्ध है

10 अथवा उससे अधिक वेद सैट लेने पर 30 प्रतिशत की छूट दी जायेगी

प्रत्येक आर्य समाज, स्कूलों के पुस्तकालयों, वाचनालयों तथा प्रत्येक घर में परमात्मा की वाणी वेदों का होना आवश्यक है। अधिक से अधिक संख्या में अग्रिम आदेश भेजकर भारी छूट का लाभ उठायें। डाक व्यय 225/- रुपये अलग से देना होगा। प्रारम्भिक स्तर पर 25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की योजना क्रियान्वित की जायेगी। अपना आदेश 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा "दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-2 के पते पर अग्रिम भेजकर अपना वेदों का सैट बुक करा सकते हैं।

-: प्रकाशक :-

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, "दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

पंजीयन संख्या DELMUL/2005/15488
डाक पंजीकरण संख्या DL(c)-01/1213/15-17
Licence to Post without prepayment of Postage. [U (c)-289/2015-17]

परमैश्वर्यवान् ईश्वर

विशंविशं मघवा पर्यशायत जनानां धेना अवचाकशद् वृषा।
यस्याह शक्रः सवनेषु रण्यति स तीव्रैः सोमैः सहते पृतन्यतः।।

—ऋ० १०/४३/६

ऋषिः—कृष्ण आङ्गिरसः।। देवता—इन्द्रः।। छन्दः—जगती।।

विनय—नारायण प्रभु प्रत्येक मनुष्य के हृदयकुटीर में आकर लेटे हुए हैं, हम इसे जानते हों या न जानते हों। सबमें चुपके से लेटे हुए ये नारायण प्रत्येक मनुष्य की ज्ञानक्रियाओं को भी साक्षात् देख रहे हैं, बल्कि उन ज्ञानक्रियाओं को अपने प्रकाश से प्रकाशित कर रहे हैं। ये नारायण हममें जागते तब हैं जब इन्हें अपने इस ज्ञान की, अपने श्रेष्ठ–से–श्रेष्ठ ज्ञान की, भेंट चढ़ायी जावे, जब यह सोमरस इन्हें पिलाया जावे। सर्वश्रेष्ठ भक्ति और सर्वश्रेष्ठ सोमसवन तत्त्वज्ञान का निष्पादन ही है। भगवान् इसी के भूखे हैं। इसी के लिए प्रत्येक के अन्दर बैठे उसकी ज्ञानक्रियाओं की निहार रहे हैं। प्रत्येक मनुष्य कुछ–न–कुछ अपना सोमसवन कर रहा है, प्रत्येक मनुष्य कभी–न–कभी विवेक करने, तत्त्वज्ञान के खोजने और ज्ञान का निष्कर्ष निकालने के लिए बाधित होते हैं; अतः वे सबके अन्दर बैठे धैर्य से प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह सच है कि जिसके अन्दर यथेच्छ सोमरस को पाकर वे भगवान् जाग उठते हैं वह निहाल हो जाता है। उसमें ऐसा अद्भुत सामर्थ्य प्रकट होता है कि उसके सामने संसार की कोई भी भक्ति ठहर नहीं सकती। बस, देर यही है कि वे किसी के सोमस्वन को स्वीकार कर लेवें, किसी को अपना लेवें। जिसे वे अपना लेते हैं, वर लेते हैं उसके सामने तो वे अपने सम्पूर्ण सर्वसमर्थ रूप में, अपने सम्पूर्ण 'शक्र' और 'वृषा' रूप में प्रकट हो जाते हैं। सचमुच ज्ञान की सर्वोच्च शक्ति है। ज्ञानी ही संसार के विकट–से–विकट पाप आक्रमणों को सह सकता है। ज्ञान के बिना शैतान की फौजों के सामने कोई नहीं ठहर सकता; 'प्रसंख्यान' के सर्वश्रेष्ठ ज्ञान को भी प्रभु–अर्पण कर देने पर भक्त योगी को अपनी धर्ममेघ समाधि में जो सोम की वर्षा मिलती है उन तीव्र सोमों (उच्च ज्ञानों) के सामने शैतान की सैकड़ों आक्रमणकारी फौजें भी एक क्षण में परास्त हो जाती हैं; सब पाप और क्लेश समाप्त हो जाते हैं।

शब्दार्थ—**मघवा**=परमैश्वर्यवान् ईश्वर **विशं विशम्**=प्रत्येक मनुष्य में **परि अशायत**=लेटे हुए हैं, चुपके से व्यापे हुए हैं और **वृषा**=वे सुखवर्षक ईश्वर **जनानाम्**=सब मनुष्यों की **धेनाः**=ज्ञानक्रियाओं को **अवचाकशत्**=देख रहे हैं या प्रकाशित कर रहे हैं। **अह**=परन्तु **शक्रः**=ये सर्वशक्तिमान् ईश्वर **यस्य**=जिसके **सवनेषु**=सवनों में, ज्ञान–निष्पादनों में **रण्यति**=रम जाते हैं, इन्हें स्वीकार कर लेते हैं **सः**=वह पुरुष **तीव्रैः सोमैः**=अपने इन तीव्र सोमों द्वारा, महाबली उच्च ज्ञानों द्वारा **पृतन्यतः**=सब आक्रमणकारियों को, बड़े–से–बड़े हमलों को **सहते**=सहता है, जीत लेता है।

साभार-'वैदिक विनय' से
आचार्य अभयदेव विद्यालंकार

प्रतिष्ठा में :–

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

सोशल मीडिया के माध्यम से
स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य युवा सन्यासी व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें www-facebook-com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें व अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।

ई–मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती की स्मृति में वैदिक विरक्त मण्डल ने 'शांति प्रार्थना सभा' आयोजित की

आर्य समाज का एक शक्तिशाली स्तम्भ गिर गया

– स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

23 अगस्त, 2015 (रविवार) को 'पतंजलि योगधाम' आर्य नगर, ज्वालापुर (हरिद्वार) में वैदिक विरक्त मण्डल ने स्वामी सुमेधानन्द जी के देहावसान के उपरान्त उनकी स्मृति में एक 'शांति प्रार्थना सभा' का आयोजन किया, जिसमें 50 संन्यासियों, वानप्रस्थी पुरुष व महिलाओं और प्रधान श्री गोविन्द सिंह भण्डारी व मन्त्री श्री दयाकृष्ण काण्डपाल, आर्य पतिनिधि सभा, उत्तराखण्ड तथा वैदिक वानप्रस्थ संन्यास आश्रम के निवासी विरक्तों व विरक्तिनियों ने दिवंगत जीवात्मा को अपने-अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किये।

प्रार्थना सभा की अध्यक्षता स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी संचालक, पतंजल योगधाम, ज्वालापुर और कार्यकारी प्रधान, वैदिक विरक्त मण्डल ने की। सभा का संचालन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के व्यवस्थापक व वैदिक विरक्त मण्डल के संयोजक स्वामी सोम्यानन्द सरस्वती जी ने किया। सर्वप्रथम स्वामी सोम्यानन्द जी ने स्वामी सुमेधानन्द जी के जीवन, उनके द्वारा आर्य जनता के हित में किये गये कार्यों, उनके वैदिक विचारों के सम्बन्ध में चर्चा करते हुए कहा कि स्वामी सुमेधानन्द जी के देहावसान से रिक्त स्थान को भरना सम्भव नहीं है। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन मानव सेवा में अर्पित कर दिया। यज्ञ कर्म को उन्होंने अपने जीवन का विशेष उद्देश्य बनाया। राष्ट्र की उन्नति व समृद्धि हेतु वे गत पंद्रह वर्षों से शरद ऋतु में 24 घण्टे का अखण्ड यज्ञ प्रतिवर्ष दयानन्द मठ, चम्बा (हिमाचल प्रदेश) में कराते थे तथा इसी कारण उनका हिमाचल प्रदेश की राजनीति में विशेष प्रभाव था और हिमाचल प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान थे। उनका मानना था कि वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार और आर्य राष्ट्र के निर्माण में सशक्त विरक्त मण्डल ही सफल हो सकता है जिसके लिए वे सदैव आर्य विद्वानों को संन्यास ग्रहण करने हेतु प्रोत्साहित किया करते थे क्योंकि विरक्त व्यक्ति ही निष्कपट, निर्पेक्ष, न्यायाचरण, निराभिमान, निडर और पक्षपात रहित होकर जनता में व्याप्त कुरीतियों, अन्धविश्वासों, पाखण्डों, अत्याचारों आदि बुराईयों

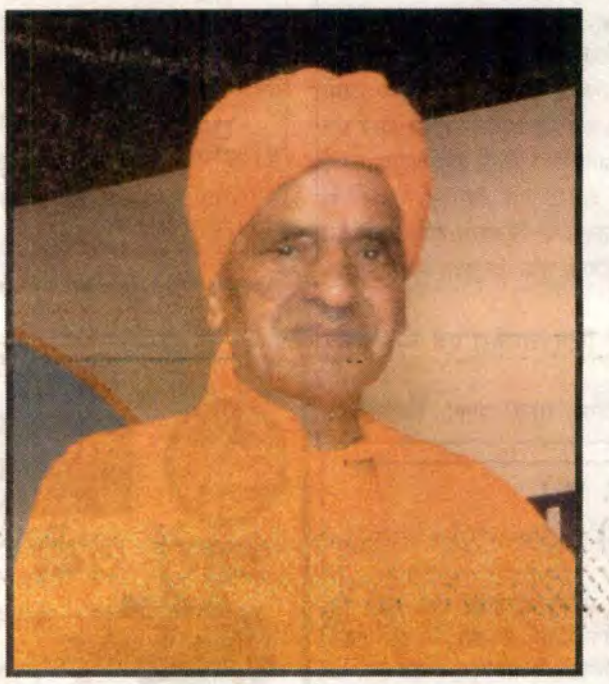

को समाप्त करने में विशेष योगदान दे सकता है और तभी आर्य राष्ट्र का बनना सम्भव है।

तदोपरान्त स्वामी शान्तानन्द जी, गंगीरी (अलीगढ़), स्वामी शिवानन्द बहादुरगढ़ (हरि.), स्वामी आत्मानन्द, कादौंन (मथुरा), स्वामी धर्मानन्द कौंकेरा (मथुरा), स्वामी केवलानन्द, वैदिक वानप्रस्थ संन्यास आश्रम, ज्वालापुर, ब्रह्मानन्द (वै. वा. संन्यास आश्रम), महात्मा विष्णुमुनि, महात्मा विजय किशन, पूज्य अशोकलता यति, वेद प्रकाश मुनि सभी वैदिक वानप्रस्थ संन्यास आश्रम से सम्बद्ध, म. नन्दमुनि, फरेरा (आगरा) म. सत्यमुनि (बुलन्दशहर), क्षेत्रमुनि (बुलन्दशहर), बृजमुनि (योगधाम) म. विद्यामुनि (योगधाम), वेद प्रकाश मुनि (योगधाम), म. आत्ममुनि (योगधाम) ज्वालापुर आदि ने भी स्वामी सुमेधानन्द (चम्बा) की जीवात्मा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि और शुभकामनाएं व्यक्त की, आचार्य मुकेश मेधार्थी (नैष्टिक) प्रबन्धक, पतंजलि योगधाम ने भी स्वामी जी के प्रति अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये।

अन्त में स्वामी दिव्यानन्द जी, कार्यकारी प्रधान, वैदिक विरक्त मण्डल ने सभी उपस्थित आर्यजनों व संन्यासियों का सभा को सफल बनाने में सहयोग के लिए आभार व्यक्त किया और कहा कि स्वामी सुमेधानन्द जी की जीवात्मा को सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि जिस तरह हम सब संगठित रूप से स्वामी सुमेधानन्द जी के नेतृत्व में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार और यज्ञों के आयोजनों में उनका साथ देते रहे उसी प्रकार भविष्य में भी विरक्त मण्डल को सुदृढ़ बनाकर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में अपना समुचित योगदान निरन्तर देते रहेंगे।

तदोपरान्त सभी ने खड़े होकर दिवंगत आत्मा को मौन श्रद्धांजलि अर्पित की।

– स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती, कार्यकारी प्रधान, वैदिक विरक्त मण्डल

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (फोन : 011-23274771, 23260985 टेलीफैक्स : 23274216)
सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वेबसाइट : www.vedicaryasamaj.com
वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक सहमति होना अनिवार्य नहीं है।